लोकगाथा भरथरी : नंदा जाहि का?

निर्वेश कुमार दीक्षित

भरथरी छत्तीसगढ़ की एक लोक-गाथा है। भारत देश के प्रत्येक राज्य में कोई-ना-कोई लोकगाथा रची बसी है। उसी तरह छत्तीसगढ़ के अलावा अन्य ऐसे भी कई राज्य हैं, जहाँ भरथरी लोक-गाथा रची-बसी है। यह राजा भर्तृहरि के भरथरी कहे जाने तक की ही कथा नहीं है, बल्कि उनके शौर्य और वैराग्य की गाथा है। लोक-गाथाओं को अलंकृत काव्य से अलग इसलिए रखा जाता है, क्योंकि इसमें रचयिता का पता नहीं चलता, मूल पाठ भी प्रमाणित नहीं होता, संगीत, नृत्य तथा इसमें स्थानीयता होती है। मौखिक अस्तित्व, लंबी कथावस्तु पदों की बार-बार आवृत्ति और ऐतिहासिक दृष्टि से भी यह संदिग्ध होते हैं। तत्कालीन सामाजिक स्थिति, लोक-गाथाओं में देखने को मिलती है, यदि हम लोक-गाथाओं को ध्यान पूर्वक देखें तो पता चलता है कि लोक-गाथाएँ जहाँ की भी हो अन्य स्थानों पर पहुँच कर वहाँ की विशेषताओं को अपना लेती हैं। किसी घटना विशेष से लोक-गाथा का निर्माण होता है, इनमें वातावरण तथा स्थानीयता का समावेश हो जाता है। हमारे देश में मौखिक परंपरा लंबे समय से चली आ रही है। वेद परंपरा भी मौखिक ही थी, बाद में शिष्यों द्वारा इसे लिपिबद्ध करने का कार्य किया गया। उसी प्रकार लोक-गाथाएँ भी लिपिबद्ध नहीं होती थीं, मौखिक रूप से ही चली आ रही थीं। उदाहरण स्वरूप कहें कि 'ढोला मारू' की लोक-गाथा चूँकि राजस्थान से हैं, इसलिए उसमें ऊँटों का वर्णन मिलता है, क्योंकि वहाँ ऊँट सामान्य जीवन का हिस्सा है। कहने का तात्पर्य है कि लोकगाथा जिस क्षेत्र से उत्पन्न होती है, जिस क्षेत्र में मौखिक रूप से बोली, सुनी जाती है। उस क्षेत्र की क्षेत्रीयता उसमें स्वतः ही समाहित हो जाती है।

लोकगाथा

लोकगाथा को हम अंग्रेजी शब्द ballad का पर्याय कह सकते हैं। यह शब्द 'वेप्लेर' शब्द से आया है, जिसका अर्थ होता है—नृत्य करना। परंतु धीरे-धीरे इस शब्द का उपयोग सिर्फ 'लोकगाथा' के लिए होने लगा। लोकगाथा की परिभाषा पर विभिन्न विद्वानों के अपने अलग-अलग मत देखने को मिलते हैं, परंतु कुछ बातें ऐसी हैं, जो सभी परिभाषाओं में समान रूप से देखने को मिलती हैं।

लोकगाथा को जी. एन. कितरेज ने 'कथात्मक गीत' कहा, जबकि फ्रेंक सिजविक लोकगाथा को 'वर्णनात्मक सरल गीत' मानते हैं, जो लोक की धरोहर है। जो लोक की जिह्वा में मौखिक रूप से विद्यमान हैं। प्रोफेसर एफ. बी. गुमेर ने इसे सामुदायिक नृत्यों से सम्बद्ध व्यक्ति शून्य काव्य पंक्ति कहा। उसी तरह से 'छोटे-छोटे पदों में रचित कविता' को लोक-गाथा का दर्जा देते हैं। लूसी पाउंड इसकी उत्पत्ति पर प्रश्न उठाते हुए साधारण कथा गीतों को ही लोक-गाथा का दर्जा देते हैं। यदि सभी विद्वानों के मतों का समग्र अध्ययन करें तो गीतात्मकता लोक-गाथा का मूल तत्व दिखायी पड़ता है। विस्तृत कथानक वाले प्रभावशाली गीत भी इन्हें कह सकते हैं। जनसाधारण के बीच मौखिक रूप से इनका जन्म हुआ है यह किसी विशेष वर्ग या व्यक्ति की नहीं, अपितु संपूर्ण समाज की संपत्ति हैं।

लोक-गाथाओं का कोई निश्चित नाम नहीं होता। अलग-अलग राज्यों में अलग-अलग नामों से इसे जाना जाता है। गुजरात में 'कथा गीत' तो यही महाराष्ट्र में 'पाउडा' कहलाता है। यही नहीं, बल्कि राजस्थान में इसे 'गीत कथा' कहते हैं। विषय एवं आकार की दृष्टि से इसका विभाजन किया जाता है। यह छोटी एवं वृहद आकार की भी हो सकती है। कभी-कभी प्रबंध काव्य-सी रचना भी इसमें देखने को मिलती है।

डॉक्टर कृष्णदेव उपाध्याय ने तीन प्रकार से लोक-गाथाओं का वर्गीकरण

किया है–

1. प्रेमकथात्मक गाथा
2. रोमांच कथात्मक गाथा
3. वीर कथात्मक गाथा

प्रेम संबंधी वर्णनात्मक गीतों या लोकगाथा को प्रेम कथात्मक गाथा के अंतर्गत रखा जाता है। प्रेम में उत्पन्न घटनाएँ, प्रेम का विपरीत परिस्थितियों में उत्पन्न हो ना, उसी में पलना-बढ़ना इसमें संघर्ष की एक अवस्था बनी रहती है। राजस्थान की 'ढोला मारू' की कथा, पंजाब में 'हीर रांझा' 'सोहनी महिवाल' प्रेम कथात्मक लोक-गाथा का उदाहरण है।

सत्य की असत्य पर विजय बताने वाली लोकगाथा, रोमांचकारी एवं नायिका प्रधान कथात्मक गीत, रोमांच कथात्मक गाथा के अंतर्गत रखे जाते हैं, इनमें नायिकाओं का जीवन अत्यंत रोमांचकारी घटनाओं से भरा होता है।

तृतीय प्रकार की गाथा वीर कथात्मक गाथाओं की है। किसी वीर के साहस और युद्ध कौशल इत्यादि का वर्णन इसमें किया जाता है। इस प्रकार की लोक-गाथा में वीर पुरुष नायक होता है। यह नायक न्याय के लिए, नारी की रक्षा के लिए संघर्षरत दिखायी पड़ता है। इस प्रकार की लोक-गाथा में आल्हा इत्यादि को रखा जाता है।

इन तीनों प्रकार की लोक-गाथाओं के अलावा डॉ. सत्यव्रत सिन्हा लिखते हैं–योग कथात्मक लोक-गाथा इस नाम से एक वर्ग बताया, उन्होंने इस प्रकार की लोक-गाथा में नायक बाद में योग धारण कर योगी बन जाता है। उसके भीतर विरक्ति आ जाती है। इसी के अंतर्गत राजा भरथरी एवं गोपीचंद की लोक-गाथा को रखा गया है। गाथा का विषय है गोरखनाथ के शिष्यत्व को ग्रहण करने वाले राजा भरथरी बाद में अपनी रानी को छोड़कर योगी बन गये थे।

कथाओं को सुनने से यह ज्ञात होता है कि राजा भर्तृहरि विक्रमादित्य के भाई थे। ऐसा माना जाता है कि महात्मा योगी गोरखनाथ जब शहर में आये और भर्तृहरि के दरबार में उनका सत्कार किया गया तब अपने स्वागत से प्रसन्न होकर भर्तृहरि को गोरखनाथ ने एक ऐसा फल दिया, जिसे खाने पर कभी बुढ़ापा नहीं आता। इस बारे में जब राजा ने सोचा कि ऐसे फल का वह क्या करेंगे तब उन्होंने यह फल अपनी पत्नी

पिंगला को देने का विचार किया, जिससे वह सदा ही युवा बनी रहे। कथा ऐसी भी है कि पिंगला राज्य के कोतवाल पर मोहित थीं, लेकिन यह बात राजा नहीं जानते थे। रानी को जब यह फल दिया गया तब उन्होंने यह फल कोतवाल को देने का विचार किया, ताकि वह लंबे समय तक रानी की इच्छा पूर्ति करता रहे, परंतु जब 'फल' कोतवाल को प्राप्त हुआ तब वह किसी वैश्या के प्रेम में था। तो कोतवाल ने युवा बनाये रखने के लिए वह फल वैश्या को दिया, परंतु वैश्या ने यह सोचकर कि राज्य के लिए राजा अति आवश्यक है और राजा से ही प्रजा का अस्तित्व बना रहेगा, उसने फल राजा भर्तृहरि को दिया। राजा ने आश्चर्य से देखा कि यह फल वैश्या को कैसे प्राप्त हुआ तब क्रमिक पड़ताल के पश्चात् पता चला कि फल वैश्या तक कैसे पहुँचा। सच सुनकर राजा आश्चर्य में पड़ गये और वह बहुत ही चिंतित हुए तब उन्हें समझ आया कि किस प्रकार रानी ने उन्हें धोखा दिया है। प्रिय पत्नी के धोखे से राजा भर्तृहरि के मन में वैराग्य उत्पन्न हो गया। उसके पश्चात् वे अपना राज्य छोड़कर 12 वर्ष तक उज्जैन की एक गुफा में तपस्या करते रहे। भर्तृहरि ने 'नीति शतक', 'श्रृंगार शतक', 'वैराग्य शतक' जैसे ग्रंथ लिखे। इस गुफा के पास एक गर्म राख की ढेर रहती है, जो हमेशा गर्म बनी रहती है वहाँ भर्तृहरि की एक प्रतिमा भी है। कहा जाता है कि यह गुफा उनके भाँजे गोपीचंद की है, क्योंकि यह कथा एक राजा के वैरागी होने की कथा है इसका वर्णन 'वैराग्य शतक' में मिलता है।

भर्तृहरि या भरथरी की कथा में मुख्य रूप से 2 पात्र हैं। भरथरी और उनके भाँजे गोपीचंद। छत्तीसगढ़ में भरथरी की कथा आयी कैसे? जबकि यह कथा बिहार, उत्तर प्रदेश और बंगाल में प्रचलित है। छत्तीसगढ़ में इसके आने के संबंध में नंदकिशोर तिवारी जी कहते हैं–

"बंगाल के जोगी लोग जब उज्जैन जाते थे। तब रास्ते में ही छत्तीसगढ़ का क्षेत्र पढ़ता था, जिससे यह कथा छत्तीसगढ़ में प्रचलित हो गयी। नाथ संप्रदाय का आरंभ नवीं-दसवीं शताब्दी माना जाता है। बंगाल, बिहार के आस-पास योगी नाम की एक जाति रहती थी, यह उच्च सोच के जाति-पाति को ना मानने वाले, परंतु अनपढ़ लोग थे। यह लोग भी नाथपंथी योगियों के समान ही थे। बौद्ध और शैव के मिश्रण से ही नाथ पंथ बना था। धीरे-धीरे हिंदी प्रदेशों में इनका फैलाव हुआ। यह लोग स्वयं को 'जोगी' कहते थे। यही लोग अपने लोकगीतों के माध्यम से जनता का मन मोह लेते थे। छत्तीसगढ़ में भरथरी किसी विशेष जाति का गीत नहीं है, जो लोग भी इसे गाते हैं, उन्हें 'योगी' कहा जाता है। जब यह लोग भरथरी की लोक-गाथा का गायन करते हैं, तब गीत में भी 'योगी' शब्द आता है। प्रारंभ में भरथरी कोई एक व्यक्ति गाता था, जो खंजरी नामक वाद्य यंत्र बजाकर गाया करता था। बाद में हारमोनियम, मंजीरा, तबला, ढपली इत्यादि वाद्य यंत्रों के साथ इसका गायन होने लगा। धीरे-धीरे गाकर योगी लोगों ने नाचना भी शुरू कर दिया। यह लोककथा भी अपनी यात्रा के साथ छत्तीसगढ़ी रूप-रंग को अपने में समाहित करने लगी। छत्तीसगढ़ी भरथरी में 'सतनाम' शब्द भी देखने को मिलता है। नाम की महिमा का गान ही सतनाम होने के कारण यह भरथरी में शामिल हो गया–

"बालक टेर ये बबूर

पर के पथरा ल ओ

कय दिन नोनी ह का सहय्य

बालक टेर ये बबूर के

पर के पथरा ल ओ

कय दिन कईना ह का सहय्य

कइना तैमूर ओर, जे मा नईये दीदी

मोर लाठी के मार ल खावय ओ

बाई खाये ओ, रानी ये दे जी

जउने समय कर बेरा मा

सुनिले भगवानय

कइसे विधि कर रोवत हे

सतखंडा ये ओ

सातखण्ड के ओगरी

बत्तीसखण्ड के न, अंधियारी म रामसाय गु मा

मोर कलपि कलप रानी रोवय

बाई रोवय ओ, रानी ये दे जी।"

इसे यदि हिंदी में कहें–

एक पुत्र की कल्पना की गयी है। वह भी बबूल के पेड़ के फूल की तरह 'पुत्र' प्राप्ति की चाह में दुखों को कब तक सहन करे रानी। उनसे छोटे और छोटों की गोद में भी संताने हैं, परंतु रानी की गोद सूनी है। बच्चे की किलकारी सुनने की चाह में रानी तरस-तरस रो रही है। इसका छत्तीसगढ़ी रूपांतरण–

"मोर ले छोटे अउ छोटे के सुंदर गोदी म ओ

देख तो दीदी बालक खेलत हे

मोर अभागिन के ओ

मोर गोदी म राम

बालक नई ये गियां।।"

लोक-जीवन में राजा भरथरी की गाथा का आज भी बहुत महत्व है। भरथरी कथा ने लोक के मध्य में पहुँचकर एक नयी ऊर्जा प्रदान की है। छत्तीसगढ़ में मुख्यरूप से सुरुज बाई खांडे ने भर्तृहरि की लोक-गाथा को छत्तीसगढ़ की जनता के मध्य मंच के माध्यम से लगातार पहुँचाया है, जिसमें भर्तृहरि के जीवन, नीति और उपदेशों को सामान्य जन की भाषा और शैली में ही, उन्होंने जन के बीच पहुँचाने का कार्य किया है। लोकजीवन में राजा भरथरी कहावतों और मुहावरों के माध्यम से पहुँच रहे हैं। इनकी कथा का गायन अत्यंत रोचक होता है।

एक कथा यह भी मिलती है कि जब राजा भरथरी अपनी पत्नी पिंगला के साथ वन में शिकार के लिए गये। काफी देर बाद हिरणों का एक झुंड दिखायी दिया, तब भरथरी ने एक हिरण पर प्रहार करना चाहा, तो उन्हें पिंगला ने रोक दिया और कहा यह मृगों का राजा है इसे मारने पर इनके बहुत से प्रजा मृगों का पालन कौन करेगा? फिर भी भरथरी ने उस मृगराज को उसकी खाल निकालने के उद्देश्य से वध कर दिया। मरते वक्त हिरण ने काफी करुणामयी बातें राजा भर्तृहरि से कहीं, जिससे राजा का मन द्रवित हो गया। जब राजा मृगराज के मृत शरीर को लादकर ले जाने लगे तब उनकी भेंट गोरखनाथ से हुई। तब राजा ने उस हिरण को पुनः जीवित करने का निवेदन गोरखनाथ से किया। गोरखनाथ जी ने राजा भरथरी का उनके शिष्य बन जाने की शर्त पर हिरण को जीवित कर दिया। तब से ऐसा माना जाता है कि राजा भरथरी गोरखनाथ के शिष्य हो गये। छत्तीसगढ़ में भरथरी की प्रख्यात गायिका सुरुज बाई खांडे को इस लोक-गाथा का प्रमुख आधार माना जाता है। उन्होंने 'सुर मोहिनी लोकगाथा समिति' बनाकर मंच पर प्रस्तुति देना प्रारंभ किया। सबसे पहले इन्हें रतनपुर मेले में मंच प्रदान किया गया था, चूंकि सुरुज बाई खांडे ने देश-विदेश के मंचों तक अपनी विशेष गायन शैली में भर्तृहरि की कथा को जन-जन तक पहुँचाने का कार्य किया है, परंतु कुछ दिन पूर्व 69 वर्ष की आयु में सुरुज बाई खांडे का हृदयाघात से निधन हो गया, जो सुरुज बाई खांडे 1986 में 'भारत महोत्सव कार्यक्रम' में सोवियत रूस में अपनी कला का यादगार प्रदर्शन कर चुकी थीं, जिन्होंने देश विदेश तक भरथरी की लोकगाथा को पहुँचाया। उनका निधन, भरथरी लोक गायन को करारा झटका था। पूरे प्रदेश में इनके जाने के पश्चात् भरथरी लोकगाथा गायन में रिक्तता महसूस की जा रही है। अन्य और भी कलाकार जैसे–रेखादेवी जलक्षत्री, गरिमा दिवाकर, सरस्वती निषाद, सीमा कौशिक, किरण शर्मा भी हैं, परंतु भरथरी गायन के आधार स्तंभ के रूप में सुरुज बाई खांडे को ही जाना जाता है। किसी मंच पर जब वे भरथरी गायन करती तब एक विशेष वेश-भूषा में होती थीं। यह वेश-भूषा ना केवल मंच पर जाने के कारण, बल्कि वे रोज नित्य प्रति ऐसी ही वेश-भूषा को धारण करके और सज संवरकर तैयार होती थी। उनके श्रृंगार में छत्तीसगढ़ी आभूषण धारण करती थीं। छत्तीसगढ़ी आभूषणों में वे पुतरी, बहुटा, नागमोरी, चूड़ी, पटा, करधन इत्यादि तमाम छत्तीसगढ़ी आभूषणों से सज्जित होकर इस लोक-गाथा का गायन मंच पर करती थीं। सुरुजबाई खांडे को उनकी उत्कृष्ट कला प्रदर्शन पर बहुत से पुरस्कार भी प्राप्त हैं–2000–01 में मध्यप्रदेश सरकार ने देवी अहिल्याबाई सम्मान प्रदान किया।

इसके अतिरिक्त छत्तीसगढ़ सरकार ने इन्हें दाऊ रामचन्द्र देशमुख पुरस्कार 2006 और स्व. देवदास बंजारे स्मृति पुरस्कार भी प्रदान किया।

1949 में जन्म लेने वाली सुरुज बाई खांडे ने 7 वर्ष की आयु में ही भरथरी लोकगाथा को अपने नाना रामसहाय धृतलहरे से सीखना प्रारंभ कर दिया था। सुरुजबाई ने दैनिक भास्कर को एक साक्षात्कार में बताया था कि पति लखन के साथ जब मजदूरी करने बिलासपुर आयी थीं और मजदूरी कर जब घर लौटती तब पूरे 'अलाप' (विशेष ध्वनि) में भरथरी गाना शुरू कर देती, तब आस-पास के लोग उन्हें पगली कहा करते थे। हमें यहाँ यह जानने की आवश्यकता है कि 1920 के आस-पास रामसहाय धृतलहरे या अन्य समकक्षों के माध्यम से भरथरी लोक-गाथा का यह स्वरूप छत्तीसगढ़ में फल-फूल रहा था। पूर्व में इकतारा, खंजरी इत्यादि बजाकर केवल एक व्यक्ति इसका गायन करता था, जबकि इसका वर्तमान स्वरूप थोड़ा भिन्न है।

'इकतारा' भारतीय सांस्कृतिक परंपरा का एक लोक तंतुवाद्य यंत्र है। यह वाद्य यंत्र मूलतः घुमक्कड़ गवैयों द्वारा प्रयोग किया जाता था। लौकी का फल सुखाकर इसका निचला हिस्सा गोलाकार तैयार किया जाता, उसके बाद उसमें बाँस की कमची लगाकर तार से दोनों भागों को संबद्ध कर बनाया जाता था और जब तार को छेडा जाता तब धुन गुंजायमान होती थी। इकतारा चूंकि घुमक्कड़ गवैयों के पास होता था, इससे भी हम यह कह सकते हैं कि भर्तृहरि की कथा का प्रसार इन्हीं घुमक्कड़ गवैयों ने किया है। प्रश्न यह उठता है कि राजा भर्तृहरि का नाम यहाँ भरथरी कैसे हो गया? इसके लिए क्षेत्रीय बोलियों को जिम्मेदार माना जा सकता है। लोग जब भर्तृहरि के उच्चारण के लिए जिह्वा को तैयार नहीं कर पाए तब अपनी बोली में उन्होंने इसे भरथरी कहना उचित और सरल समझा। एक प्रकार का ध्वनि विभ्रम इसमें दिखायी पड़ता है। जब भी हम भर्तृहरि कहते हैं सामान्य रूप से भरथरी सुनायी देता है और इसी ध्वनि विभ्रम के कारण भर्तृहरि छत्तीसगढ़ में भरथरी हो गये। वर्तमान में भरथरी गायन के क्षेत्र में एक नाम काफी चर्चित है वह नाम रेखा जलक्षत्री जी का है। उनसे चर्चा करने पर उन्होंने बताया कि भरथरी गायन का कार्य वह काफी लंबे समय से कर रही हैं। उन्हें भरथरी गायन के लिए प्रेरणा कहाँ से मिली? इस प्रश्न का जवाब देते हुए भरथरी गायिका रेखा जलक्षत्री ने बताया कि उनके दादा मेहत्तर प्रसाद ने उन्हें सबसे पहले भरथरी गायन के लिए प्रेरित किया। उनके दादाजी उनसे कहा करते थे कि "रेखा, भरथरी गायन के क्षेत्र में तुम अपनी कला का प्रदर्शन करो क्योंकि इस लोक-गाथा के गायन को इस क्षेत्र के अन्य कलाकार ज्यादा तरजीह नहीं दे रहे हैं।" तब से रेखा जलक्षत्री ने भरथरी लोक-गाथा का गायन शुरू किया। उन्होंने अपनी गायन शैली के विषय में बताया कि वह खडे होकर मंच पर एक रागी के साथ भरथरी गायन करती हैं। अब यह रागी कौन है? इसके जवाब में उन्होंने कहा-रागी वह व्यक्ति होता है, जो मुख्य गायक के गायन के बीच-बीच में 'हाँ', 'हो' इत्यादि सहमति देता रहता है। रेखा जलक्षत्री अपने गायन में वाद्य यंत्र को बजाने वाली 10 लोगों की टीम के साथ गायन करती हैं। सुरुज बाई खांडे जहाँ खड़े होकर भरथरी गायन करती थीं, पर रेखा जी गायन के साथ विशेष भाव भंगिमा, थोड़ा नृत्य के साथ लोकगाथा का गायन करती हैं। इन्होंने 90 के दशक में 'महाकालेश्वर भरथरी पार्टी' बनाकर इस लोक-गाथा का गायन प्रारंभ किया था।

जब लोक गायिका मंच पर वाद्य यंत्रों के साथ नृत्य मिश्रित गाथा गायन करती हैं, तब जनता पूरी रोचकता से मंच पर ध्यान लगाये रहती है। इसका कारण यह है कि गाथा गायन में रोचक कथा का गायन किया जाता है। जब भरथरी की कथा का गायन किया जाता है तब आगे क्या होगा? या कथा में आगे क्या हुआ? की भावना दर्शक एवं श्रोता को मंच से जोड़े रखती है। साथ-साथ वाद्य यंत्रों के साथ रोचकता आ जाती है, जो इसमें दर्शक एवं श्रोता को डुबो देती है, क्योंकि यह लोक की अपनी भाषा में होते हैं। तब इसे बच्चे, महिलाएँ, बूढ़े सभी भली प्रकार से समझ लेते हैं, जो इस लोक-गाथा को लोकप्रिय बना देता है।

स्वयं की पहचान को बचाने के संघर्ष में ही लोक-गाथा गायक अपना जीवन समर्पित करते जा रहे हैं। इसका एक उदाहरण सुरुजबाई खांडे हैं, जो छत्तीसगढ़ से लेकर देश-विदेश में भरथरी लोकगाथा का गायन कर नाम कमा चुकी हैं, परंतु सरकार द्वारा उन्हें सिर्फ चतुर्थ श्रेणी की एक नौकरी प्रदान की गयी, परंतु दुर्घटना वश वह भी ज्यादा दिन तक उनके साथ नहीं रही। जातिवाद, राजनीति इत्यादि की मानसिकता ने और अब आधुनिकीकरण ने भरथरी जैसी कई लोक-गाथाओं पर संकटकाल ला दिया है। इस तरह के लोक गायकों को शासन से उचित दर्जा ना मिलना भी लोक-जीवन में लोक-गाथा के विलुप्त होने का एक कारण बन रहा है। उसी तरह लोक-कलाकारों को मीडिया भी नहीं दिखाती या उन्हें जनता के बीच लाने का कोई प्रयास नहीं करती, जिससे लोक-गाथाएँ अब सुनने को बहुत कम मिलती हैं, जो कलाकार आधुनिकता से कुछ बच बचाकर लोकगाथा का गायन व पोषण कर रहे हैं, उन्हें प्रोत्साहन, मंच, स्थान इत्यादि की आवश्यकता है तभी यह कला जीवित रह पाएगी। अन्यथा देर नहीं कि लोकगाथा गायन समय के गर्त में पूरी तरह समा जाएगा। छत्तीसगढ़ की प्रख्यात भरथरी गायिका सुरुजबाई को यह चिंता हमेशा रहती थी कि उनके बाद भरथरी गायन का क्या होगा? भिलाई की वंदना और भोपाल में किसी द्वारिका को उन्होंने भरथरी सिखायी पर उन्हें यह पता नहीं चल पाया कि उनकी शिष्याएँ भरथरी का गायन कर रही हैं या नहीं? भरथरी या किसी भी लोक-गाथा को वर्तमान पीढ़ी सुनना नहीं चाह रही है या उन्हें सुनने को नहीं मिल रहा है। इसका कारण मनोरंजन के बहुत से साधनों का आना है। जीवन की आपाधापी में समय निकालकर अपनी लोक-संस्कृति को सहेजना आम-जन के लिए बहुत मुश्किल हो गया है। छत्तीसगढ़ में भरथरी लोकगाथा गायन आज विलुप्ति की ओर बढ़ रहा है। लोक गायकों की कमी या लोगों के बीच आयोजन की व्यवस्था का न होना ही इसके प्रदर्शन में कमी ला रहा है। फेसबुक, यूट्यूब इत्यादि संचार माध्यमों से इसे संरक्षित करने की और अधिक आवश्यकता है ताकि इनका संरक्षण हो सके, परंतु इनके संरक्षण से ही काम नहीं चलेगा, बल्कि इनका सकारात्मक रूपांतरण करना बेहद जरूरी है। इस प्रकार की कला को तकनीक और बाजार से सामंजस्य बिठाना होगा, परंतु चिंता की बात यह है कि आधुनिक राजनीति में, उसकी प्राथमिकताओं में, लोक-संस्कृति अपना स्थान बना पायी है या नहीं?

निश्चित ही शासन द्वारा इस लोक-गाथा को या किसी अन्य लोक-गाथा को उतना संरक्षण या प्रोत्साहन नहीं मिल पा रहा है। जितना मिलना चाहिए, अपनी जीवटता और कुछ अच्छे लोगों के समर्थन से सुरुजबाई खांडे इस कला को लेकर विदेशों तक पहुँची। उसी प्रकार रेखा जलक्षत्री ने भारत के बहुत से

हिस्सों में अपनी कला का प्रदर्शन कर इस कला को जर्मनी, मास्को तक प्रदर्शित किया। माना जाता है सन् 2003 तक तो इन्हें कुछ संरक्षण और प्रोत्साहन शासन से प्राप्त होता रहा, उस समय के तत्कालीन मुख्यमंत्री श्री अजीत प्रमोद कुमार जोगी भरथरी कलाकार सुरुज बाई खांडे के घर तक गये थे, परंतु वर्तमान कोरोना वायरस या कुछ समय पूर्व इन कलाओं का मंचन होना कम हो गया। कोरोना वायरस से जहाँ जीवन बचाने की होड़ रही ऐसे समय में प्रत्यक्ष मंचों में किसी भी कला का प्रदर्शन नहीं हो सकता था, जिससे जनता के बीच लंबे समय से न जा पाने के कारण जनता भी रंगमंच और कलाकारों से दूर होती गयी। रेखा जी ने बातचीत में बताया तत्कालीन समय में इलाहाबाद कैंद्र खैरागढ़ भोपाल का विशेष योगदान उन्हें मिला था। रेखा जी इतनी दक्ष थी इस गायन में कि उन्होंने सात शिष्यों को भी भरथरी सिखाया। उनकी एक शिष्या किरण शर्मा मंच पर प्रस्तुति भी देने लगी हैं। लोक गायिका रेखा जी के जीवन में ऐसा भी क्षण आया कि प्रोत्साहन देने के स्थान पर उनके परिवार समेत उन्हें 'नाच गाना करने वाली' कहकर परिवार सहित समाज से अलग कर दिए थे। वही उपेक्षा करने वाले लोग बाद में रेखा जी को देखने को तरसते थे। नये कलाकारों के विषय में रेखा जी ने बताया कि सस्ती लोकप्रियता के लिए नये कलाकार लोक गायन को छोड़कर फूहड़ गीतों को मंच से परोस रहे हैं इस तरह विलुप्तीकरण की कगार पर खड़ी लोक-संस्कृति को बचाने के लिए सरकार और जनता दोनों को आगे आना होगा। अन्यथा भरथरी या अन्य सभी लोकगायन की परंपरा समय के गर्त में समा जाएंगी।

सन्दर्भ

1. भोजपुरी लोकगाथा : डॉ. सत्यव्रत सिंह
2. लोक साहित्य की भूमिका : डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय
3. नाथ संप्रदाय : डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी
4. भरथरी छत्तीसगढ़ी लोकगाथा : नन्दकिशोर तिवारी
5. छत्तीसगढ़ी लोकजीवन और लोक साहित्य का अध्ययन : डॉ शकुंतला वर्मा

निर्वेश कुमार दीक्षित,

शोधार्थी (हिंदी विभाग), शा. विश्वनाथ यादव तामस्कर स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय,

दुर्ग (छत्तीसगढ़)